लोक संस्कृति का जीवन सरिताएं

लेखक : डॉ. पीसी लाल यादव
तारीख : June 05, 2023

पर्यावरण दिवस विशेष आलेख

भारतीय संस्कृति में नदियों का बड़ा सम्मान जनक स्थान है। नदियों को माँ कहकर इनकी पूजा की जाती है। ये हमारा पोषण अपने अमृत समान जल से करती हैं। अन्य सभ्यताओं में देखें तो उनमें नदियों का केवल लौकिक महत्व है। लेकिन भारत में लौकिक जीवन के साथ – साथ पारलौकिक जीवन के लिए भी नदी को कल्याण कारी माना गया है। इसलिए मृत्यु संस्कार के पश्चात अस्थियाँ नदियों में ही विसर्जित की जाती हैं। नदियाँ हमारे पापों को हरती हैं।

भारतीय सभ्यता और संस्कृति नदियों के पवन तट पर ही पुष्पित और पल्लवित हुई। लोक संस्कृति नदियों की जल धाराओं के साथ उमंगित होकर विकसित हुई हैं। नदियाँ हमारी माता ही नहीं, अपितु हमारी संस्कृति की संवाहिका भी हैं। जहाँ जंगल – पर्वत हमारी सनातन संस्कृति के श्रोत व शक्ति केंद्र हैं, वहीं नदियाँ ज्ञान और साधना की तपस्थली हैं।

नदियों के तटो पर ही तीर्थस्थल हैं। जहाँ से हमें हमारी ऋषि – मुनियों की सांस्कृतिक विरासत का पुण्य लाभ मिलता है। गंगा, यमुना, सरस्वती, नर्मदा, गोदावरी, महानदी, कृष्णा, कावेरी, गोमती, गंडकी आदि के साथ ही अन्य छोटी – बड़ी नदियाँ बिना किसी धार्मिक, जातीय या नस्लीय भेद भाव के अपना जल सबको समान रूप से बाँटती हैं। नदियाँ सामाजिक समरसता और समता व सदभाव का पाठ पढ़ाती हैं। अपने दोनों हाथों से अन – धन लुटाती हैं। दोनों किनारों की धरती को ममता से सींचती हैं। नदियों का जयगान हमारे राष्ट्र गीत में भी समाहित है –
विंध्य हिमाचल यमुना गंगा,

उच्छल जलधि तरंग।

हमारे छत्तीसगढ़ राज्य का राजकीय गीत तो हमारी पावन नदियों के जयघोष और चरण वंदना से ही प्रारंभ होता है –

अरपा पैरी की धार, महानदी हे अपार
इन्द्रावती ह पखारे तोर पईया।
महुं पाँवें परँव तोर भुईया
जय हो,जय हो, छत्तीसगढ़ मइया ॥

ये हमारी सनातन संस्कृति है। हमारी लोक संस्कृति है। जहाँ मातृ भूमि, जन्मदात्री माता और नदियों को माँ कहकर सम्मान दिया जाता है। ये तीनों ही हमारे जीवन के सर्जक हैं। छत्तीसगढ़ की लोक संस्कृति में नदी को जल देवती कहा जाता है। नदी हो या नाला, कुआँ हो या तालाब, जहाँ भी जल है, उसे गंगा की संज्ञा दी जाती है। हाथ में जल उठाकर जल देवती की सौगंध ली जाती है। नदी की महत्ता हमारे लोक जीवन की इस लोकोक्ति से प्रमाणित होती है।

नंदिया नहावे सम्मुख पाय, तरिया नहाय आधा।
कुआँ नहाय कुछु न पावय, घर नहाय ब्याधा ॥

हमारी आधुनिक जीवन शैली ने हमें रोगी बना दिया है। आधुनिकता ने हमें इतना अँधा कर दिया है कि अब हम अपनी माँ सदृश्य नदियों को प्रदूषित कर उसका अपमान कर रहे हैं। आज की नई पीढ़ी नदी – स्नान के आनंद और सुख से वंचित है। क्योंकि नदियाँ औद्योगिकी करण के कारण इतनी प्रदूषित हो चुकी हैं कि उसमें स्नान करना संभव नहीं है। अमृत तुल्य जल जहर बन गया है। तब ये लोकगीत याद आता है जो आज की विसंगति को प्रकट करता है –

ये नंदिया बईमान जंवारा ल झींकत लेगे राम
हुई रे हुई जंवारा ल झींकत लेगे राम
ये नंदिया बई मान जंवारा ल झींकत लेगे राम
माटी के मटकुलिया बना ले, पीतल के दरवाजा
राजा पीतल के दरवाजा।
भूरी भईस के दूध दुहा ले, गंडई वाले राजा
चिटिक दूध पीले न, ये गरमे गरम ग
चिटिक दूध पी ले ना। हुई रे हुई जंवारा......

यह गीत दोनों ही अर्थों में सटीक है। नदी के साथ हमने बेईमानी की है। तब भी वह हमारे साथ बेईमानी न करके ममता लुटा रही है। नदी तो नदी है। वह माता है। पूत भले कपूत हो जाये, पर माता कभी कुमाता नहीं होती है। मेरे गाँव का ज्वलंत उदाहरण सुरही नदी छोटी नदी है, किन्तु सदानीरा है। उद्गम से लेकर संगम तक इसके तट पर अनेकानेक पुरातात्विक महत्त्व के स्थल हैं। घटियारी. भँवरदाह, भड़भड़ी, गंडई, तुमड़ीपार, देउरगाँव जैसे अनेक धार्मिक स्थल हैं। किन्तु अब सदानीरा सुरही गंदी नालियों के पानी और प्लास्टिक, डिस्पोजल गिलास जैसी वस्तुओं से बज-बजा रही है। इसका दोषी कौन है? हम ही ना। रेत माफिआयों ने रेत निकाल कर, और बेजा कब्जा कर स्वार्थी लोगों ने नदी तट की अमराइयों को उजाड़ दिया। ईंट भट्टा सजाकर नदी का जीवन समाप्त कर दिया है। यही हाल अरपा का है। नदी छोटी हो या बडी सबकी स्थिति लगभग यही है -

नदिया में आबे बेला रे, खड़े हँव जोड़ीदार
बेला नदिया में आबे
फुटहा मंदिर के कलश नई हे
दू दिन के अवईया दरस नई हे
नदिया में आबे।

यह गीत तब प्रेमी – प्रेमिका के लिए नदी की ओर से आमंत्रण था। पर अब हमारे स्वार्थ ने सचमुच हमारे मन मंदिर के कलश को तोड़ दिया है। छत्तीसगढ़ की लोक संस्कृति में नदियों का बड़ा सम्मान है। नदी घाट पर स्नान के लिए जाते हैं तो स्नान से पूर्व नदी को, उसके जल को प्रणाम किया जाता है। गंगा के समान पूजा जाता है। हमारे तीज – त्योहारों के लिए नदी देवी है। भोजली गीत में भोजली की मान – प्रतिष्ठा गंगा के रूप में की जाती है – इसे देवी गंगा कहा जाता है।

देवी गंगा, देवी गंगा, लहर तुरंगा
हमर भोजली दाई के भीजे आठों अंगा
ओ....ओ.....ओ......देवी गंगा।
पानी बिन मछरी, पवन बिन धाने।
सेवा बिना भोजली के तरसे पराने
ओ....ओ....ओ......देवी गंगा।

विवाह संस्कार में धरमटीका के पहले दूल्हा- दुल्हन की नहडोरी नदी या तालाब मे ही की जाती थी। तब इसका आनंद ही अलग था। छत्तीसगढ़ी बिहाव गीत मे नदी का वर्णन उमंगित करता है। भड़वनी की कुछ पंक्तियाँ –

नंदिया तीर के पटुवा भाजी, पट – पट, पट – पट करथे रे
आये हे बरतिया तेन मन, मट – मट, मट – मट करथे रे।
नंदिया तीर के पटुवा भाजी, उल्हा -उल्हा दिखथे रे
आये हे बरतिया ते मन, बुढवा – बुढवा दिखथे रे।।

सचमुच प्रकृति के साथ खिलवाड़ की प्रवृत्ति ने हमें समय से पहले बुढा कर दिया है। यह हमारी आधुनिक विकृत मानसिकता का परिचायक है। वह दिन दूर नहीं जब हमारी भावी –

पीढ़ी जन्म के साथ ही मृत्यु के करीब होगी। करमा गीत की एक बानगी जिसमे नदी के असीम सुख और आनंद को समाहित किया गया है –

हाये रे हाये रे मजा कहाँ पाबे रे
आमचानी झुलना के, मजा कहाँ पाबे रे
तता – तता, नांगर जोते, तात भात खाये
नंदिया तीर ढाढ़े नोनी, मने मन मुस्काय।
मजा कहाँ पाबे रे........ ।

नदियों के जल प्रदूषित हो जाने के कारण उसका प्राकृतिक वैभव समाप्त हो गया है। अब नंदियों मे पहले की तरह जल

जीव नहीं मिलते। न मछलियाँ मिलती हैं, न पक्षी कलरव करते हैं। पानी तो जहर हो चुका है। तब जहरीले जल में जीवन कहाँ संभव होगा? गौरा गीत में एक लोक अनुभूति –

नंदिया भीतर के जलहल टेंगना
झाँई लगे जस मोतिन के अँचरा
छोड़ो – छोड़ो रे टेंगना मोरो रे अंचर ल
मोर घर ससुरे बिराजे हो ना।

ये पीड़ा सबकी है। नाचा गीत में नजरिया गीत प्रस्तुत किया जाता है। जिसमें यमुना नदी में गोपी द्वारा पानी भरने का वर्णन है –

अति गहिरी ओ दाई, अति गहिरी ओ दाई
अति गहिरी ओ दाई, अति गहिरी
पनिया भरन कइसे जावँव, जमुना अति गहिरी।
कोनो मेर सपटे कान्हा देखत होही
डर लागे झन फोरे गगरी।
जमुना अति गहिरी।

हमारी स्वार्थपरता ने हमारे जल श्रोतों को विषासक्त बना दिया है। चाहे वह नदी हो या तालाब, कुआँ हो या बावली। इनका अस्तित्व खतरे में है। नदी का जल जहरीला हो चुका है। तालाब पट चुके हैं। कुआँ और बावली इतिहास की चीजे हो चुकी हैं। तब भला हमारी संस्कृति कैसे बच पायेगी? बिहाव गीत की ये पंक्तियाँ हमारी आँखे खोलती हैं -

दे तो दाई खुरा धरी लोटा, गंगा नहाये ल जाहूँ
गंगा अटइगे, सीता झपइगे, कइसे करँव स्नाने
महानदी बेल उमर हरियाये ।

गंगा का सूखना हमारी सभ्यता का सूखना है। सीता का डूबना हमारी संस्कृति का डूबना है। हमारी संस्कृति ही हमारी सीता है। जब तक नदी का संरक्षण नहीं होगा, हमारी सीता और संस्कृति इसी तरह विनष्ट होती रहेगी। एक और कटु सत्य –

आमा ल मारे झेंझरिया – झेंझरिया, अमली ल मारे तुसारे, रे भाई
समधिन ल मारे बोली - बचन में, खड़े – खड़े पछताय।
महानदी बेल उमर हरियाय ।

नदी की जल धाराएं सभ्यता की सांसे हैं। सांसे नही रहेंगी तो जीवन कहाँ रहेगा? सांसे रहेंगी तभी तो हमारा जीवन रूपी बेल हरी – भरी रहेगी और हमारी खुशियां महानदी की जल राशि की भांति हिलोरें लेंगी। यह तभी संभव होगा, जब हमारी नदियाँ सुरक्षित होंगी। नदी को हम महानदी बनायें और अपनी संस्कृति को जीवंत बनाएं –

नंदिया के तीर हे पुन्नी के रात हे,
थोरिक बिलम ले संगी, बाकी अउ बात हे ।

बाकी बात यही है कि जिस तरह से नदियाँ हमे जीवन देती हैं, उसी तरह से हम भी नदियों को जीवन दें। अपनी सेवा से, संकल्पों से उनकी पवित्रता को बनायें रखें। तभी हमारे लोक का यह गान सार्थक होगा –

काली दाह जाय, काली दाह जाय
छोटे से श्याम कन्हैया .....
छोटे मोटे रूखवा कदम के, भुईया लहसे डार,
ऊपर में बइठे कन्हैया, मुख मुरली बजाय।
छोटे से श्याम कन्हैया ....

हमारी पवित्र नदियाँ काली – दाह न बने। कालिया नाग के रूप में रेत माफिया, भू माफिया, जंगल माफिया हमारी नदियों का दोहन कर जहर फैला रहें और हमारी संस्कृति को कलुषित कर रहे हैं। उन्हें पहचाने, और कृष्ण बन कर उनका मर्दन करें। तभी हमारी प्रकृति और संस्कृति संरक्षित और संवर्धित होगी।

सरपिन ह भोगावत हे, गोंदा ह अइलावत हे
बड़ती के बड़ोरा में संस्कृति हमर मइलावत हे।
जागव संगी – संगवारी, सरकार ल जगावव जी
अरपा के पानी दिनों दिन काबर तरियावत हे?

आलेख